कृष्णदास संस्कृत सीरीज २४८

वृद्ध-वसिष्ठसंहिता

पाठसंवादसंवलितः 'नारायणी' हिन्दीटीकासहितश्च

सम्पादकोऽनुवादकश्च
डॉ. चन्द्रमौलि रैणा

संशोधकः
प्रो. रामचन्द्र पाण्डेय



प्रथमो भागः

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि०सं० २०७१, सन् २०१५

ISBN: 978-81-218-0363-2

© चौखम्बा कृष्णदास अकादमी

के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १११८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : (०५४२) २३३३४५८ P.P. & २३३५०२०

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
(आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice01@gmail.com
web-site : www.chowkhambasanskritseries.com

www.drcmraina.com

भूमिका

दिवाकरं ग्रहाधीशं हेरम्बञ्च सरस्वतीम्।
विविच्यते प्रणम्यादौ वसिष्ठस्यां हि संहिताम्॥

समस्त प्राणियों के आधिभौतिक, अध्यात्मिक आधिदैविक तीन प्रकार के दुःखों को विनाश करने में पूर्णरूपेण सशक्त और चतुर्वर्ग प्राप्ति के अत्यन्त सुन्दर मार्गदर्शक वेद हैं।

भारतीय संस्कृति का मूलाधार वेद हैं। वेद से ही हमें अपने धर्म और सदाचार का ज्ञान होता है। हमारी पारिवारिक, सामाजिक, वैज्ञानिक एवं दर्शनिक विचारधाराओं के स्त्रोत भी वेद ही हैं। वेदों के छः अङ्ग कहे गये हैं *– 1. शिक्षा, 2. कल्प, 3. व्याकरण, 4. निरुक्त, 5. छन्द तथा 6. ज्योतिष। इन्हें षड्वेदाङ्गों की संज्ञा दी गई है। मन्त्रों के उचित उच्चारण के लिये शिक्षा का, कर्मकाण्ड और धार्मिक अनुष्ठानों के लिये कल्प का, शब्दों के सही ज्ञान के लिए व्याकरण का, अर्थ ज्ञान के निमित्त शब्दों के निर्वचन के लिए निरुक्त का, वैदिक छन्दों के ज्ञान हेतु छन्द का और अनुष्ठानों के उचित काल निर्णय के लिए ज्योतिष का उपयोग सर्वमान्य है।

महर्षि वसिष्ठ ने ज्योतिष को वेदपुरुष का नेत्र कहा है–

वेदस्य चक्षुः किल शास्त्रमेतत्प्रधानताङ्गेषु ततोऽस्य जाता।
अङ्गैर्युतोऽन्यैः परिपूर्णमूर्तिश्चक्षुर्विहीनः पुरुषो न किंचित्॥

(वृद्धवसिष्ठ संहिता अ. १ श्लोक ६)

वेद का नेत्र होने से यह शास्त्र सम्पूर्ण अङ्गों में प्रधानता को प्राप्त हो गया है। जैसे मनुष्य बिना चक्षुइन्द्रिय के किसी भी वस्तु का दर्शन करने में असमर्थ

---

* शब्दशास्त्रं मुखं ज्योतिषं चक्षुषी श्रोत्रमुक्तं निरुक्तं च कल्पं करौ।
या तु शिक्षाऽस्य वेदस्य सा नासिका पादपद्मद्वयं छन्द आद्यैर्बुधैः॥

(सि.शि. ग्रहगणिते श्लोकसंख्या १०)

www.drcmraina.com

विषयानुक्रमणिकाः

अध्यायः	पृष्ठाकः
१. अथ शास्त्रस्वरूपाध्यायः	१-६
२. अथार्कचाराध्यायः	७-१६
३. अथ चन्द्रचाराध्यायः	१७-२५
४. अथ भौमचाराध्यायः	२६-३३
५. अथ बुधचाराध्यायः	३४-४१
६. अथ गुरुचाराध्यायः	४२-९०
७. अथ शुक्रचाराध्यायः	९१-९८
८. अथ शनिचाराध्यायः	९९-१०१
९. अथ राहुचाराध्यायः	१०२-१२६
१०. अथ केतुचाराध्यायः	१२७-१४७
११. अथ वर्षेशादिनिर्णयफलाध्यायः	१४८-१६५
१२. अथ तिथिस्वरूपाध्यायः	१६६-१८९
१३. अथ वारस्वरूपाध्यायः	१९०-२००
१४. अथ नक्षत्रस्वरूपाध्यायः	२०१-२३८
१५. अथ योगाध्यायः	२३९-२४९
१६. अथ करणाध्यायः	२५०-२५६
१७. अथ मुहूर्ताध्यायः	२५७-२५९
१८. अथ गोचरविचाराध्यायः	२६०-२९८
१९. अथ सङ्क्रान्त्याध्यायः	२९९-३०८
२०. अथ चन्द्रताराबलाध्यायः	३०९-३१२
२१. अथोपग्रहाध्यायः	३१३-३१५
२२. अथ ग्रहकूटाध्यायः	३१६-३१८
२३. अथ लग्नबलाध्यायः	३१९-३३०

www.drcmraina.com

—o—

वृद्ध-वसिष्ठ संहिता

१

अथ शास्त्रस्वरूपाध्यायः

प्रह्वोऽम्भोजभवामरेन्द्रनिकरस्फूर्जत्किरीटोज्वल-
ज्ज्योत्स्नालीढपदारविन्दयुगलस्तत्वस्वरूपो रविः।
ब्रह्माण्डोदरसंस्थिताखिलजगत्तद्ध्वान्तविध्वंसनं
यः कुर्वन्निखिलं जगत्प्रतिदिनं पर्य्येति कालात्मकः॥१॥

नारायणी टीका–देदीप्यमान मुकटों की उज्जवल कान्ति एवं संदीप्त चरण-कमलों से युक्त कमलोत्पन्न ब्रह्मा, इन्द्रादि देवताओं के समूह, समस्त जगत् की प्रतिदिन परिक्रमा कर ब्रह्माण्ड के उदर में स्थित समस्त संसार के अन्धकार को नष्ट करते रहने वाले, काल-तत्वस्वरूप श्री सूर्यनारायण के सम्मुख प्रणामार्थ नतमस्तक हैं॥१॥

ज्योतिः शास्त्रं समग्रं प्रथमपुरुषतः स्वर्णगर्भाद्विदित्वा।
पूर्वं ब्रह्मा ततोपर्यखिल-मुनिगण-प्रार्थनाद्यच्चकार॥
तच्चेदं सुप्रसन्नं मृदुपदनिकरैर्गुह्यमध्यात्मरूपं।
शश्वद्विश्वप्रकाशं ग्रहचरितविदां निर्मलं ज्ञानचक्षुः॥२॥

हिरण्यगर्भ भगवान् श्रीसूर्यनारायण जी से सम्पूर्ण ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान सर्वप्रथम ब्रह्मा जी ने प्राप्त किया। तदनन्तर उन्होंने समस्त मुनिवृन्द द्वारा प्रार्थना किये जाने पर निरन्तर विश्व प्रकाशक अत्यन्त गुप्त उक्त अध्यात्म विद्या को मृदुपद समूह सहित अत्यन्त प्रसन्नभाव से ग्रह चरित के ज्ञाता दैवज्ञों के लिए प्रकाशित किया, यह शास्त्र वस्तुतः ग्रहचरित दैवज्ञों के हेतु निर्मल ज्ञान चक्षुस्वरूप है॥२॥

स्कन्धद्वयं वृत्तविचित्रमर्थगम्भीरमादावधुना यदुक्तम्।
तत्संहितास्कन्धमिदं तृतीयं वक्ष्ये जगन्मोहननामधेयम्॥३॥

पूर्वोक्त विचित्र छन्दोगर्भित, गम्भीर अर्थों से युक्त (होरा, सिद्धान्त) दो स्कन्धों के पश्चात् मैं अब जगन्मोहन नामक तृतीय संहिता स्कन्ध का वर्णन कर रहा हूँ॥३॥

क्रतुक्रियार्थं श्रुतयः प्रवृत्ताः कालाश्रयास्ते क्रतवो निरुक्ताः।
शास्त्रादमुष्मात्किल कालबोधो वेदांगताऽमुष्य ततः प्रसिद्धा॥४॥

www.drcmraina.com

वेदों का प्रवर्त्तन यज्ञ-क्रियाओं के सम्पादनार्थ हुआ। वे यज्ञ काल के आश्रित कहे जाते हैं और काल इस ज्योतिष शास्त्र से जाना जाता है। इसलिये इस शास्त्र का वेदाङ्गत्व इसी से सिद्ध है।।४।।

छन्दः पादौ शब्दशास्त्रं च वक्त्रं कल्पः पाणी ज्योतिषं चक्षुषी च।
शिक्षा घ्राणं श्रोत्रमुक्तं निरुक्तं वेदस्याङ्गान्याहुरेतानि षट् च।।५।।

वेद के ये छह अङ्ग निम्नाङ्कित हैं यथा छन्दःशास्त्र को वेद का पाद, व्याकरण को मुख, कल्पशास्त्र को हाथ, ज्योतिषशास्त्र को नेत्र, शिक्षा को नाक एवं निरुक्त को कान कहा है।।५।।

सिद्धान्तः संहिता होरारूपं स्कन्धत्रयात्मकं
वेदस्य निर्मलं चक्षुःज्योतिः शास्त्रमनुत्तमम्।।
अस्य शास्त्रस्य सम्बन्धो वेदाङ्गमिति कथ्यते।
अभिधेयं च जगतः शुभाशुभनिरूपणम्।।

(नारदसंहितायांप्रथमाध्याये श्लोक ४-५)

वेदस्य चक्षुः किलशास्त्रमेतत्प्रधानतांगेषु ततोऽस्य जाता।
अङ्गैर्युतोऽन्यैः परिपूर्णमूर्तिश्चक्षुर्विहीनः पुरुषो न किञ्चित्।।६।।

इस प्रकार वेदाङ्गों में प्रधान माने जाने वाले ज्योतिषशास्त्र को वेदों का निर्मल चक्षुःस्वरूप कहा जाता है। जैसे सर्वाङ्ग सम्पूर्ण मूर्ति होने पर भी कोई नेत्रहीन पुरुष अकिंचन ही होता है।।६।।

अध्येतव्यं ब्राह्मणैरेव तस्माज्ज्योतिःशास्त्रं पुण्यमेतद्रहस्यम्।
एतद् बुध्वा सम्यगाप्नोति यस्मादर्थं धर्मं मोक्षमग्र्यं यशश्च।।७।।

पुण्यमय, रहस्यमय ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन ब्राह्मणों को ही करना चाहिये; क्योंकि धर्म, अर्थ, मोक्ष एवं सर्वोत्तम यश की प्राप्ति इस शास्त्र को भली-भाँति जानने से ही सम्भव है।।७।।

श्रुतिस्मृतिज्ञः पटुरर्थशास्त्रे शब्दोपदिष्टः कुशलः कलासु।
त्रिःस्कन्धविज्ज्योतिषिकः सुवेषः कुली सुवृत्तस्त्वगदः सुशीलः।।८।।

श्रुतिस्मृति का ज्ञाता, अर्थशास्त्र में निपुण, व्याकरणशास्त्र का उपदेष्टा, अखिल कलाओं में कुशल, सुन्दर वेषयुक्त, कुलीन सदाचारी, आरोग्य सम्पन्न और शीलयुक्त त्रिस्कन्ध शास्त्र को जानने वाले व्यक्ति को ही श्रेष्ठ ब्राह्मण (दैवज्ञ) माना जाता है।।८।।

www.drcmraina.com

अध्येतव्यं द्विजैर्यत्नात् पुण्यमायुर्यशस्करम्।
पुण्यकालपरिज्ञानादश्वमेधफलं लभेत्।

पुण्यकालं च यो वेत्ति स तु वेत्ति परांगतिम्।
कालज्ञानेऽतिकुशलं तद्देवा ब्राह्मणं विदुः।।

(कश्यपसंहितायां प्रथमाध्याये श्लोक २१-२२)

त्रिस्कन्धपारङ्गम एव पूज्यः श्राद्धे सदा भूसुरवृन्दकाद्यैः।
नक्षत्रसूची किल पापरूपो हेयः सदा सर्वसुधर्मकृत्ये।।९।।

मण्डलाग्रगण्य प्राचीन विद्वानों ने त्रिस्कन्ध ज्योतिषशास्त्र पारङ्गत विद्वान् को ही श्राद्ध में सर्वश्रेष्ठ पंक्ति पावन एवं पूज्य स्वीकार किया है। इसके विपरीत समस्त धर्मकृत्यों में सदा नक्षत्र सूचक (ज्ञानरहित) को पाप स्वरूप एवं सर्वदा हेय (वर्जित) माना गया है।।९।।

शास्त्रस्वरूपग्रहचारमानप्रत्येकपञ्चाङ्गफलं क्षणाख्याः।
गोचारसङ्क्रान्ति निशीशताराबलोपखेटग्रहकूटभाश्च।।१०।।

(यहाँ) ज्योतिषशास्त्र का स्वरूप, ग्रहचार, नवविधमान, पञ्चापङ्गफल, मुहूर्त, गोचर, सङ्क्रान्ति, चन्द्रबल, ताराबल, उपग्रह ग्रहकूट राशिकूट (लग्नबल)।।१०।।

नारद संहिता में प्रतिपाद्य विषय-

संज्ञान्युक्तानि सर्वाणि सम्यक् ज्ञात्वा पृथक् पृथक्।
शास्त्रोपनयनाध्यायो ग्रहचारोऽब्दलक्षणम्।।१०।।
तिथिर्वारश्च नक्षत्रं योगः तिथ्यर्द्धसंज्ञकम्।
मुहूर्तोपग्रहोऽर्कस्य संक्रान्तिर्गोचरस्तथा।।११।।
चन्द्रताराबलाध्यायः सर्वलग्नार्त्तवाह्वयः।
आधानपुस्त्वंसीमन्तो जातनामान्नभुक्तयः।।१२।।
चौलाङ्कुरोप मौंजीछुरिकाबन्धने क्रमात्।
समावर्तनवैवाहप्रतिष्ठाः सद्मलक्षणम्।।१३।।
यात्राप्रवेशनं सद्यो वृष्टिकूर्म विलक्षणम्।
उत्पातलक्षणं शान्तिर्मिश्रकं श्राद्धलक्षणम्।।१४।।
सप्तत्रिंशद्भिरध्यायैर्नारदीयाख्य संहिता।
य इमां पठ्यते भक्त्या स दैवज्ञो हि दैववित्।।१५।।

(नारदसंहितायां प्रथमाध्याये श्लोक १०-१५)

आधानपुंसवनमष्टममङ्गलं च सञ्जातकर्मवरनामनवान्नभुक्तिः।
चूडाविधिव्रतविवाहनृपाभिषेकयात्राप्रवेशनववास्तुसुरप्रतिष्ठाः।।११।।

गर्भाधान, पुंसवन, अष्टममङ्गल (सीमन्त), जातकर्म, नामकरण, नवान्न प्राशन, चूडाकर्म, व्रतबन्ध, विवाह, राज्याभिषेक, यात्रा, त्रिविधप्रवेश, नववास्तु, सुरप्रतिष्ठा।।११।।

www.drcmraina.com

काश्यपसंहिता में प्रतिपाद्य विषय-

स्कन्धत्रयात्मकं शास्त्रमाद्यं सिद्धान्तसंज्ञकम्।
द्वितीयं जातकस्कन्धं तृतीयं संहिताह्वयम्।।४।।
ग्रहाणां मध्यमाभुक्तिः स्फुटभुक्तिरनन्तरम्।
दिक्साधनं ततश्छाया लग्नकाल विनिर्णयः।।५।।
चन्द्रार्कग्रहणं सम्यक् तयोश्च परिलेखनम्।
समागमो युद्धभेदो भद्रहाणां युतिस्तथा।।६।।
उदयास्तमयज्ञानं चन्द्रशृङ्ग नतोन्नतिः।
पात वैधृतयोर्भेदौ भूगोलं यन्त्रलक्षणम्।।७।।
मानक्रियामानभेदाश्चाद्य स्कन्धे प्रकीर्तिताः।
राशि भेदः खेटयोनिर्वियोनिर्जन्मलक्षणम्।।८।।
निषेको जननं पुंसामरिष्टं भङ्गलक्षणम्।
आयुर्दायो दशाभेदा भेदाश्चान्तर्दशासु च।।९।।
अष्टवर्गः कर्मजीवो राजयोगा अनेकशः।
चन्द्रयोगा द्विग्रहाद्याः प्रव्रज्यायोसम्भवा।।१०।।
गुणदोषयोर्निरूपणमुभयोरपवादमंबरोत्पातौ ।
अखिलोत्पातप्रशमनशान्तिकमिश्राख्यपैत्रिकाध्यायाः।।१२।।

गुणदोषनिरूपण, अपवाद, त्रिविधोत्पात, अखिलोत्पात, शान्तिमिश्रित पैतृकाध्याय पर्यन्त।।१२।।

राशिशीलं दृष्टिफलं ग्रहभावफलं ततः।
आश्रायाख्याश्च ये योगा योगाः संकीर्णसम्भवाः।।११।।
स्त्रीजातकं नष्टयोगं निर्याणं नष्टजातकम्।
द्रेष्काणश्च क्रिया योगा द्वितीयस्कन्धसम्भवाः।।१२।।
आदौ शास्त्रोपनयनं खेट चारोऽब्दलक्षणम्।
तिथिवासर-नक्षत्र-योगतिथ्यर्धलक्षणम्।।१३।।
मुहूर्तोपग्रहः सूर्यसंक्रान्तिर्गोचरक्रमः।
चन्द्रतारा बलैश्चैव क्रियाः षोडशकर्मणाम्।।१४।।
छुरिकाबन्धनं यात्रा प्रवेशो वास्तुलक्षणम्।
नृपाभिषेचनं देव प्रतिष्ठावस्त्रलक्षणम्।।१५।।
अग्न्युत्थानं मेघगर्भं निखिलोत्पातलक्षणम्।
तच्छान्तिर्मिश्रकाध्यायस्तृतीय स्कन्धसंभवाः।।१६।।

(कश्यपसंहितायां ४-१६, १-४-१६)

www.drcmraina.com

पञ्चोत्तरचत्वारिंशद्विपुलाध्यायैर्विराजते स्कन्धः।
अज्ञाज्ञानोपशमनमितरेषां बुद्धिवर्द्धनं नित्यम्॥१३॥

विपुलकाय पैंतालीस (४५) अध्यायों से सम्पन्न संहिता स्कन्ध प्रस्तुत है, जो अज्ञानी जनों के अज्ञानान्धकार को शमन करने में समर्थ एवं अधीत विद्वानों के लिए नित्यबुद्धिवर्धक है॥१३॥

॥इति श्रीवृद्धवसिष्ठब्रह्मर्षिविरचितायां संहितायां शास्त्रस्वरूपाध्यायः प्रथमः॥१॥

॥वृद्ध वसिष्ठसंहिता के शास्त्रस्वरूपाध्याय की 'नारायणी' हिन्दी टीका सम्पूर्ण॥१॥

पाठान्तरम्

१(अ) ज१—प्रहवस्त्रोज्यसुरासुरेन्द्र ज२—प्रहवांभोज्यसुरासुरेन्द्र, वा.—प्रह्वांभोज्य-सुरासुरेन्द्र, ज.मो. प्रह्वांभोज (प्रह्वोऽम्भोजभावमरेन्द्र)

ज१—स्फूर्यकिरीटीज्वलत्, ज२—स्पुःर्युकिरीटोज्वलत्, ज.मो.—स्पूर्जकिरीटोज्वलत्, वा.—सूर्तेत्किरिटोज्वले (स्फूर्जत्किरीटोज्वलत्)

१(ब) ज१, ज२ ज.मो, ज्योत्सना, वा.—ज्जगेत्स्ना (ज्योत्सना)

१(स) ज१—बह्मांडोदर, ज२—ब्रह्मांडोदर (बह्माण्डोदर)

१(स) ज१—ध्वांतस्यध्वशनं, ज२—ध्वांतस्यसंध्वंसनां, ज.मो.—ध्वांतस्यविध्वंसनं, वा.—जगध्वांसतस्यांविध्वंसंनं (जगत्तद्धवान्तविध्वंसनं)

१(द) ज१—कुर्वत्तिखिलं, ज२—ऊर्ध्वेनिखलं (कुवन्निखिलं)

१(द) ज१—अमत्यपनुदिनं पंर्यति, ज२—जगत्यनुदिनं, ज.मो.—जगत्प्रतिदिनं पर्यति, वा.—जगत्यनुदितर्येति (जगत्प्रतिदिनं पर्य्येति)

२(अ) ज२—सुर्ण (स्वर्ण)

२(ब) ज१—पूर्वेब्रह्मांतथोर्यखिलं, ज२—पूर्वेवलात तथो पर्याखिला वा.पूर्वब्रह्मातोपर्यखिल (पूर्वब्रह्मातोपर्यखिल)

ज१—प्रार्थनाय्यंच्चकार, वा.प्रार्थनायच्चकार (प्रार्थनाद्यच्चकार)

२(स) ज२—वक्ष्येदं (तच्चेदं)

२(द) ज१—शश्वद्विश्वं, ज२—शस्वद्विस्व, वा. वद्धिश्वत (शाश्वद्विश्व)

२(स) ज२—वक्ष्येदं (तच्छेदं)

२(ब) ज१—शश्वद्विश्वं, ज२—शस्वद्विस्व, वा. वद्धिश्वत (शाश्वद्विश्व)

३(अ) ज१—वृत्ति (वृत्त), ज१, ज२—वा.—यदुक्ता (यदुक्तम्)

३(ब) ज१—तिसीयं (तृतीयं), ज२—वक्षे, वा.वुक्ष्ये (वक्ष्ये)

४(ब) ज१—मुढ्यात्खिल, ज२—तस्माक्लि (मुष्मात्किल), ज१, ज२—मुख्यतरा (ऽमुष्यतत्र)

www.drcmraina.com

२

अथार्कचाराध्यायः

अथार्कचाराज्जगतः शुभाशुभे न्यूनाधिमासेतरमासनिर्णयः।
उद्वाहसङ्क्रान्तिदिनार्द्ध निश्चयः सर्वप्रपञ्चो भवतीति तद्वशात्॥१॥

नारायणी—सूर्यचार के प्रभाव से ही समस्त जगत् का शुभाशुभ, क्षयमासाधिमास, सौरमास, विवाह, सङ्क्रान्ति दिनार्ध (अभिजित्काल) निर्णय लिये जाते हैं और सभी प्रकार के कर्मकाण्ड सम्बन्धी प्रपञ्च भी सूर्यचाराधीन हैं॥१॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि सूर्यचारमुत्तमम्।
सूर्यचारवशादेव निखिलं कालनिर्णयः॥

(क. सं. सूर्यचाराध्याये श्लोक-१)

मकरादिराशिषट्कमुदगयनं कर्कटादिकं याम्यम्।
राशिद्वयार्कभोगात्षड्ऋतवः शिशिरादयः क्रमशः॥२॥

सूर्य के मकरादि ६ राशियों में जाने पर उत्तरायण और कर्कादि ६ राशियों में जाने पर दक्षिणायन होता है। दो-दो राशियों के सौर भोग द्वारा शिशिरादि ६ ऋतुओं का क्रमशः मान होता है॥२॥

सौम्यायनं मासषट्कं मृगाद्यं भानुयुक्तितः।
अहः सुराणां तद्रात्रिः कर्काद्यं दक्षिणायनम्॥

(ना. सं. तृतीयाध्यायेश्लोक-७८)

माघादिमासौ द्वौ द्वौ च ऋतवः शिशिरादयः।
चान्द्रो दर्शावधिः सौरः सङ्क्रान्त्या सावनो दिनैः॥

(ना. सं. ३य-श्लोक-८१)

चैत्रादिमासेन यथा क्रमेण मेषादयो द्वादशराशयः स्युः।
न्यूनाधिमासेषु समागतेषु चलन्ति तेभ्यो नियतं विनाऽपि॥३॥

चैत्रशुक्लादि मान से यथाक्रम मेषादि द्वादश राशियों में सूर्यभ्रमण करता है। न्यूनमास तथा अधिमास का समागम होने पर भी उन राशियों में रवि संचार निर्बाध गति से चलता रहता है (विपरिणामादि कहीं भी नहीं दिखाई देता)॥३॥

अधिमास क्षयमास संसर्प अंहस्पति मासों का निर्णय

सर्वेषु मासेष्वधिमासकः स्यात्तुलादिमासत्रयगः क्षयाख्यः।
संसर्पकः पूर्वभवोऽधिमासः पश्चाद्भवोऽहस्पतिनामधेयः॥४॥

चैत्रादि सभी मासों में अधिमास सम्भव है। तुलादि (कार्तिकादि) तीन मासों में

www.drcmraina.com

क्षय संज्ञक मास होता है। पूर्वोक्त पूर्वाधिमास संसर्प कहलाता है तत्पश्चात् क्षयमास अंहस्पति संज्ञक होता है।।४।।

कश्यप संहिता में उपलब्ध पाठ-

संक्रान्तयः स्युर्मेषाद्यश्चैत्रमासादिषु क्रमात्।
नियमेन भवेत्तत्र त्वधिमासे समागते।।
यस्मिन् मासेऽर्कसंक्रान्तिर्दर्शान्तात्प्राक् परापरम्।।
दर्शमुल्लङ्घ्य भवति संसर्पः सोऽधिमासकः।।
आरभ्य शुक्लप्रतिपत् प्रवेशात्संक्रमद्वयम्।।
आगामीन्दुक्षयस्यान्तात् प्राक् न्यूनाख्यस्वहस्पतिः।।
न्यूनमासस्तुलाषट्के त्वधिमासस्तु सर्वदा।।
स्फुटार्क संक्रमाद्विन्द्यान्न्यूनमासधिमासकौ।।

(क.सं. सूर्यचाराध्याये-२-५)

यस्मिन्दर्शस्यांतादर्वागेका परा परं दर्शम्।
उल्लंघ्य भवति भानोः सङ्क्रान्तिः सोऽधिमासः स्यात्।।५।।

जिस मास में अमावास्या की समाप्ति के पूर्व ही एक सङ्क्रान्ति हो जाए और दूसरी अमावास्या के पश्चात् सङ्क्रान्ति हो तो वह अधिमास कहलाता है।।५।।

आद्यन्तदर्शयोर्मध्ये तयोराद्यन्तयोर्यदा।
सङ्क्रान्तिद्वितयं चेत्स्यान्नयूनमासः स उच्चते।।६।।

जिस में दो अमावास्याओं के मध्य में दो सङ्क्रान्तियाँ आती हैं अर्थात् उन दो सङ्क्रान्तियों के मध्य कोई अमावास्या नहीं होती उसे क्षयमास कहते हैं।।६।।

मासप्रधानाखिलमेव कर्म मुक्त्वाखिलं कर्म न कार्यमत्र।
यज्ञोपवासव्रततीर्थयात्रा विवाहकर्मादि विनाशमेति।।७।।

मास प्रधान समस्त कृत्यों को मासों की प्रधानता त्याग कर नहीं करना चाहिये। यज्ञ, उपवास, व्रत, व्रतबन्ध तीर्थयात्रा, विवाहादिकृत्य मासों की अनवधानता से नष्ट हो जाते हैं।।७।।

कश्यपसंहिता में भी उल्लेख मिलता है—

मासौ न्यूनाधिकौ प्रोक्तौ सर्वकर्मबहिष्कृतौ।
मासप्राधान्यकं कर्म विनाऽपि ऋतुसूचकम्।।

(कश्यपसंहितायां २-६)

अश्विन्यादि नक्षत्रों में सूर्य का शुभाशुभ फल

दास्त्रादिऋक्षद्वयगे दिनेशे वृष्टिर्भवेत्क्षेमकरी जनानाम्।
भल्लयर्क्षसंस्थे यदि वृष्टिरीतिर्ब्राह्मद्वये स्यादतुलं सुभिक्षम्।।८।।

www.drcmraina.com

अश्विनी और भरणी नक्षत्रों में रवि सञ्चार होने पर यदि वृष्टि हो तो लोगों के लिए हितकारी होती है। कृत्तिका नक्षत्र में वर्षा हो तो ईतिभीतिप्रद (टिड्डी आदि कीटों से भय), रोहिणी मृगशिरा में अत्यन्त सुभिक्षप्रद है।।८।।

प्रवेशकाले यदि रौद्रभस्य वृष्टिर्भवेदीतिरनर्घता च।
शेषेषु पादत्रितयेषु भीतिरत्यल्पवृष्टिर्महती गदा च।।९।।

आर्द्रा प्रवेश के प्रथम चरण के समय ईतिभीति एवं वस्तुओं के मूल्यों में उतार-चढ़ाव (तेजी मन्दी) होता है। आर्द्रा के शेष तीन चरणों में अल्पवृष्टि तथा महामारी का भय होता है।।९।।

कश्यप ऋषि के अनुसार–

दस्त्रभाद्द्वितीयस्थेऽर्के यदि वृष्टिर्भवेत्तदा।
क्षेमं सुभिक्षामतुलं भीतिदोषोऽग्निधिष्ण्यगे।।
रोहिणी द्वितयस्थेऽर्के सस्यवृद्धिर्मनोजयः।
रौद्रनक्षत्रगे सूर्ये यदि वृष्टिर्भवेत्तदा।।
अनल्पमल्पवृष्टिः स्यादीतिदोषस्त्वनर्घता।।
आर्द्राप्रवेशे वृष्टिः स्यात्सार्धमासमवर्षणम्।।

(कश्यपसंहितायां २, ७-११)

आर्द्राप्रवेशेऽह्निजगद्विपत्तिं सस्यस्य नाशं कुरुतेऽल्पवृष्टिम्।
क्षेमं सुभिक्षं निशि सस्यवृद्धिं सुवृष्टिमत्यन्तजनानुरागम्।।१०।।

दिवा आर्द्रा प्रवेश होने पर संसार में विपत्ति, सस्यनाश एवं अल्पवृष्टि होती है। निशाकाल में आर्द्रा प्रवेश होने पर क्षेम, सुभिक्ष, सुवृष्टि, जनता में परस्पर अनुराग वृद्धि।।१०।।

पुनर्वसोर्भाद्दशधिष्ण्यवृन्दे प्रीजिर्जनानां कलहो नृपाणाम्।
मैत्रादित्रऋक्षत्रितये नराणां विभावसोः साध्वसमामयश्च।।११।।

पुनर्वसु आदि दश नक्षत्रों में वृष्टि होने पर जनता में प्रीति; परन्तु राजाओं में कलह हो। सूर्य के अनुराधा आदि तीन नक्षत्रों में आने पर मेघ घटाओं से संयुक्त हों तथा मनुष्य यात्रारत एवं रोगरहित होते हैं।।११।।

जलाधिदैवर्क्षगते पतंगे विद्युन्मरुद्वारिधनैश्चयुक्ते।
दिनेषु सार्द्धत्रितयेषु पश्चाद्रौद्रादिभेषु क्रमशः सुवृष्टिः।।१२।।

बिजली, वायु और बादलों से आकाश ढँका होने पर यदि सूर्यनारायण शतभिषा में चार करें तो आर्द्रादि नक्षत्रों में क्रमशः ३$\frac{१}{२}$ दिनों तक वृष्टि होती है।।१२।।

www.drmraina.com

भङ्गोऽस्य पौष्णर्क्षगते दिनेशे भिन्नेषु रात्रावपि वीक्षणीयम्।
विश्वादित्रृक्षत्रितये गदः स्यात्तदा सुभिक्षं त्रिषु वारुणर्क्षात्॥१३॥

रेवती नक्षत्र में वृष्टि भङ्ग, तदभिन्न नक्षत्रों में भी रात्रि का ध्यान रखते हुए विचार करें, उत्तराषाढ़ा आदि तीन नक्षत्रों में सूर्यचार हो तो रोगभय, शतभिषादि तीन नक्षत्रों में सुभिक्ष होता है॥१३॥

सूर्यमण्डलगत राहु पुत्र तामस कीलकादि केतुफल

राहोः सुतास्तामसकीलकाद्याः कबन्धकाकोष्ट्रशृगालरूपाः।
यदा रवेर्मण्डलगास्तदानीं मातंगभूपाहवभीतिदाः स्युः॥१४॥

राहु के पुत्र तामसकीलकादि धूम्रकेतु जब सूर्यमण्डल में कबन्ध (शीर्षरहितमानव) काक, ऊष्ट्र, शृगालाकृति दिखाई दें तो हाथी, राजा युद्धादि से भय होता है॥१४॥

छत्रध्वजे भाङ्कुशगोवृषाश्वदण्डास्त्रभद्रासनसिंहरूपाः।
दृष्टा रवेर्मण्डलगा यदा ते जगद्विपत्तीति भयप्रदाः स्युः॥१५॥

यदि सूर्यमण्डल में छत्र, ध्वज, गज, अङ्कुश, गो, वृष, अश्व, दण्ड, अस्त्र, भद्रासन, सिंहाकृति रूपवान केतु दिखाई दे तो वे जगद्विपत्तिकारक और ईतिभीतिप्रद होते हैं॥१५॥

नारद ऋषि के अनुसार–

ज्ञात्वा बलाबलं सम्यग्वदेत्फलनिरूपणम्।
दण्डाकारे कबन्धे वा ध्वांक्षाकारेऽथकीलके॥
दृष्टिरर्कमण्डले व्याधिर्भीतिश्चौरार्थनाशनम्।
छत्रध्वजपताकाद्यैराकारैस्तिमिरैर्घनैः ॥
रविमण्डलगैर्धूमैः स्फुलिङ्गैनाशनम्।
सितरक्तैः पीतकृष्णस्तैर्मिर्विप्रपूर्वकान्॥
हन्ति द्वित्रिचतुर्भिर्वा राज्ञोऽन्यत्र जनक्षयः।
ऊर्ध्वैर्भानुकरैस्ताम्रैर्नाशं याति च भूपतिः॥
पीतैर्नृपसुतः श्वेतैः पुरोधाश्चित्रितैर्जनाः।
धूम्रैर्नृपः पिशङ्गैश्च जलदोऽधोमुखैस्तथा॥

(ना. सं. २, ११-१५)

श्वेता द्विजान्घ्नन्ति नृपांश्च रक्ताः पीताश्च वैश्यानसिताश्च शूद्रान्।
चमूपतिं चोर्ध्वमुखाश्च रक्ताः पुरोधसं तेऽपि विचित्रवर्णाः॥१६॥

श्वेत केतु विप्र, रक्तवर्ण नृप, पीतवर्ण वैश्य, कृष्णवर्ण शूद्रों की हानि करता है। ऊर्ध्वमुख रक्तवर्ण सेनापति के लिये घातक, विचित्रवर्ण युक्त केतु पुरोहित के लिये घातक होता है॥१६॥

www.drcmraina.com

निमित्तवस्तुतो यत्नात् फलं नैमित्तिकस्य च।
खड्गाकारे नृपवधं कबन्धे व्याधितो भयम्।
ध्वांक्षे चौरभयं कीलकाकारेऽपि त्वनर्घता।
राजोपकरणाकारैश्छत्राद्यैरर्कमण्डले।।
राजाबन्धोऽन्यराजत्वं स्फुलिङ्गरर्कमण्डले।।
राजाबन्धोऽन्यराजत्वं स्फुलिङ्गर्गजनाशनम्।
मेघैर्विद्धं नृपवधं करोति रविमण्डलम्।।
सितरक्तैः पीतकृष्णैः पाटलैर्विप्रपूर्वकान्।
चमूपो नाशमायाति ताम्रैरूर्ध्वमुखैः करैः।।
पीतैर्नृपात्मजः श्वेतै पुरोधाश्चित्रितैर्जनाः।
राजधूमैः पिशङ्गैस्तैर्वृष्टिश्चाधोमुखैस्तथा।।

(क. सं. सूर्यचाराध्याये, २१-२५)

अधोमुखा धूमनिभाः क्षितीशान् वृष्टिं पिशंगाश्च तथा विधास्ते।
उक्त्वा फलं तामसकीलकानां फलं ततो मण्डलवर्णतश्च।।१७।।

धूमवर्ण अधोमुख राजघातक, भूरे रंग युक्त पीत केतु वृष्टिनाशक होता है। तामसकीलकादि केतुफल निरूपणानन्तर भास्कर मण्डल के वर्णानुरूप फल निम्न प्रकार से जानें।।१७।।

तामसकीलकसंज्ञा राहुसुताः केतवस्त्रयस्त्रिंशत्।
वर्णस्थानाकरैस्तान् दृष्ट्वाऽर्के फलं ब्रूयात।।
ते चार्कमण्डलगताः पापफलाश्चन्द्रमण्डले सौम्याः।।
ध्वाङ्क्षकबन्धप्रहरणरूपाः शाशाङ्केऽपि।
दण्डे नरेन्द्रमृत्युर्व्याधिभयं स्यात् कबन्धस्थाने।
ध्वाङ्क्षे च तस्करभयं दुर्भिक्षं कीलकेऽर्कस्थे।
राजोपकरणरूपैश्छत्रध्वजचामरादिभिर्विद्धः।
राजान्यत्वकृदर्कः स्फुलिङ्गधूमादिर्भिजनहा।।

(आचार्य वराह मिहिरः वृहत्संहितायां आदित्य चाराध्याये ७, ८, १७, १८)

ऋतुवशात् सूर्य का शुभाशुभफल

लोहितवर्णो ग्रीष्मे लोकानामीतिमीतिदः शश्वत्।
हेमन्ते व्याधिभयं पीतः प्रावृष्यवृष्टिकृत्कृष्णः।।१८।।
आखण्डलचापनिभो भूपविरोधं परस्परं तत्र।
यदि पत्रनिभो बर्हेर्द्वादशवर्षं न वर्षति क्षोण्याम्।।१९।।

ग्रीष्म में रक्तवर्ण सूर्य निरन्तर लोगों में ईतिभीतिप्रद, हेमन्त में पीतवर्ण

www.drcmraina.com

व्याधिभय, वर्षा ऋतु में कृष्णवर्ण अनावृष्टिप्रद, इन्द्रधनुषाकार सप्तवर्ण सौरमण्डल राजाओं का परस्पर विरोधकारक जानें। मयूरपंखाकारयुक्त भास्कर भूमि पर द्वादश वर्ष पर्यन्त वर्षा का अभाव करता है।।१८-१९।।

उदयास्तमये काले स्वास्थ्यं तैः पाण्डुसन्निभैः।
भास्करास्ताम्रसंकाशः शिशिरे कपिलोऽपि वा।।
कुंकुमाभौ वसन्तर्त्ता कपिलो वापि शस्यते।
अपाण्डुरः स्वर्णवर्णो ग्रीष्मे चित्रो जलागमे।।
पद्मोदराभः शरदि हेमन्ते लोहितच्छविः।
हेमन्ते प्रावृषि ग्रीष्मे रोगाणां वृष्टिभीतिकृत्।।
पीताभकृष्णवर्णोऽपि लोहितस्तु यथा क्रमात्।
इन्द्रचापार्द्धमूर्तिश्चेत् भानुर्भूपविरोधकृत्।।
मयूरपत्रसंकाशो द्वादशाब्दं न वर्षति।
शशरक्तनिभे भानौ संग्रामे ह्यचिराद् भवेत्।।

(ना. सं. २-१६-२०)

शशरक्तनिभो युद्धं राजान्यत्वं विधूपमः सविता।
श्यामनिभः कीटभयं भस्मनिभो भयदमासुरं जगतः।।२०।।

शशक रुधिर सदृश सौरमण्डलयुद्धप्रद, चन्द्रतुल्य सवितृमण्डल राष्ट्र विप्लवकारक, श्यामवर्ण कीटभय, भस्म सदृश जगत् को आसुरभावों द्वारा भयप्रद करता है।।२०।।

चन्द्रस्य सदृशो यत्र चान्यं राजानमादिशेत्।
अर्के श्यामे कीटभयं भस्माभे शस्त्रतो भयम्।।
छिद्रेऽर्कमण्डले दृष्टे तदा राजविनाशकृत्।
घटाकृतिः क्षुद्भयकृत् पुरहा तोरणाकृतिः।।
छत्राकृतिर्देशहन्ता खण्डभानुर्नृपान्तकृत।
उदयास्तमये भानोर्विद्युदुल्काशनिर्यदि।।
तदा नृपवधो ज्ञेयस्त्वथवा राजविग्रहः।
पक्षं पक्षार्द्धमर्केन्दू परिविष्टावहर्निशम्।।
राजानमन्यं कुरुते लोहितानुदयास्तगौ।
उदयास्तमये भानुराछिन्नः शस्त्रसन्निभैः।।
घनैर्युक्तः खरोष्ट्राद्यैः पापरूपैर्भयप्रदः।
ऋतुकालानुरूपोऽर्कः सौम्यमूर्तिः शुभावहः।
रविचारमिदं सम्यक् ज्ञातव्यं तत्त्ववेदिभिः।।

(नारदसंहितायां २, १६-२६)

www.drcmraina.com

भानोरुदयास्तमये चोल्कापतनं महाहवं राज्ञाम्।
परिवेषयति प्रकटं पक्षं पक्षार्द्धमेव वा सततम्॥२१॥

सूर्योदय एवं सूर्यास्त काल में (सूर्यमण्डल पर) उल्कापात राजयुद्धसूचक, निरन्तर पक्षपर्यन्त अथवा सप्ताह पर्यन्त सूर्य पर परिवेष भी उक्त फल देता है॥२१॥

यद्युपसूर्य्यकमस्यां संध्यायामर्घनाशनं प्रचुरम्।
क्षितिपति कलहः शीघ्रं सलिलभयं वा भवेन्नूनम्॥२२॥

सन्ध्या समय में प्रति सूर्य दर्शन प्रचुर मात्रा में (मूल्यों में वृद्धि) विचार सूचक, राजकलह तथा जलभयप्रद होता है॥२२॥

उदयेऽस्तमये स्वस्थं सर्वेषां न तथा विधैः।
शिशरे ताम्रवर्णोऽर्कः शुभदा कपिलोऽपि वा॥
बसन्ते कुंकुमनिभः शिवाय हरितोऽपि वा।
ग्रीष्मे स्वर्णनिभश्चित्रः प्रावृष्यम्बुजगर्भवत्॥
शरद् हेमन्ते समये लोहिताभः शुभप्रदः।
लोकानां भयदो ग्रीष्मे लोहितः सूर्यमण्डलः॥
हेमन्ते रोगदः पीतः कृष्णः प्रावृषि वृष्टिकृत्।
आखण्डलधनुः खण्डलिनभो भूपविरोधकृत्॥
न वर्षति द्वादशाष्ब्दं वर्हिपव निभोपमः।
युद्धाय शशरक्ताभो राजान्यत्वं विधूपमः॥
श्यामोऽर्कः कीटभयकृच्छस्त्रभीर्भस्म सन्निभः।
छिद्राणि मण्डले भानोर्दृश्यन्ते राजमृत्यवे॥
कुम्भरूपः क्षुद्भयदो भूपहा तोरणाकृतिः।
देशहाछत्ररूपस्तु भूपहाखण्डमण्डलः॥
उल्कादिपतनं सन्ध्याकाले राजविनाशनम्।
परिविष्ठो सदार्केन्दू पक्षं पक्षार्धमेव वा॥

(क. सं.—सूर्यचाराध्याये २६-३३)

सूर्यमण्डल के शुभलक्षण

ऋतौ वसन्ते खलु कुंकुमाभः शुभप्रदः कापिलसन्निभो वा।
आनन्ददस्ताम्रनिभो विवस्वान्यः शैशिरे वा कपिलः सुभिक्षः॥२३॥
ग्रीष्मे सदा हेमनिभो विचित्रवर्णो नृणां क्षेमशुभप्रदश्च।
अंभोजगर्भोपम शोभनश्च प्रावृष्यतीवाखिलसस्यवृद्ध्यै॥२४॥

वसन्त ऋतु में कुमकुम सदृश अथवा कपिल वर्ण आनन्दप्रद, शिशिर ऋतु में

ताम्रवर्ण अथवा कपिलवर्ण सौर मण्डल सुभिक्षप्रद, स्वर्ण सदृश विचित्र वर्ण ग्रीष्म में मानवमात्र के लिए कल्याणप्रद तथा शुभ हो, वर्षा ऋतु में रक्तकमल सदृश हो तो समस्त सस्य (फसलों) वृद्धिकारक होता है।।२३-२४।।

दिवसकृतः प्रतिसूर्य्यो जलकृदुदग दक्षिणे स्थितोऽनिलकृत्
अभयस्थः सलिलभयं नृपमुपरि निहन्त्यधो जनहा।।
रुधिरनिभो वियत्यवनिपान्तकरो न चिरात्।
परुषरजोऽरुणीकृतनुर्यदि वा दिनकृत्।।
असितविचित्रनीलपरुषो जनघातकरः।
खगमृगभैरवस्वरतरुतैश्च निशाद्युमुखे।।

(वृ. सं. २, ३७-३८)

रक्तः सूर्यः शरदि विपुलाकीर्तिसौभाग्यदश्च।
हेमन्तेऽपि त्वखिलजगतः सस्यसंपद्विवृद्ध्यै।।
ज्ञात्वा चारं दशशतकरस्यांखिलं दैववेदी।
पश्चात्सर्वं सुशुभमशुभं वा दिशेत्कालरूपम्।।२५।।

शरद् ऋतु में रक्तमण्डल प्रजा के लिए अतुलकीर्ति एवं सौभाग्यप्रद, हेमन्त में शान्तवर्ण होने पर सस्य सम्पत्ति से प्रजा सुखी हो। ऐसे ही सहस्त्रकिरण सूर्य चार को जानकर दैववेत्ता कालानुरूप शुभाशुभफलादेश कहें।।२५।।

अमलवपुरवक्रमण्डलः स्फुटविपुलामलदीर्घदीधितिः।
अविकृततनुवर्णचिह्नभृज्जगति करोति शिवं दिवाकरः।।

(वृ. सं. ३, ३९)

।।इति श्री वृद्धवसिष्ठब्रह्मर्षिविरचितायां संहितायां अर्कचाराध्यायो द्वितीयः।।२।।

।।वृद्ध वसिष्ठ संहिता के अर्कचाराध्याय की 'नारायणी' हिन्दी टीका सम्पूर्ण।।२।।

पाठान्तरम्

१ (अ) ज२-अथावर्क (अथार्क), ज१-जगत्तः (जगतः), ज२-मांतर (मासेतर)
१ (ब) ज१-दिनार्द्धनिर्णयः मु. पु. दिनाब्दनिश्चयः (दिनार्द्धनिश्चयः)
२ (अ) ज१-कर्कटादिषट्वाभ्यं, ज२-कर्कटादिषट्याम्यं (कर्कटादिकंयाम्यं)
२ (ब) ज१-शिसिर वा-शौशिरादयः (शिशिरादयः)
३ (अ) वा-चैत्रादिमासेषु (चैत्रादिमासेन), ज१ ज२-क्रमेषु (क्रमेण)
३ (ब) ज२-चलति (चलन्ति)
४ (अ) ज१- कस्यातुलादिषट्केपिन्यूनन्यामाक्षः
ज२-कस्यातुलादिषटेपिचशून्यमासः

वा.–स्यात् तुलादिषट्केऽपि च न्यूनमासः (स्यात्तुलादिमासत्रयगः क्षयाख्यः)

४ (ब) ज१, ज२–संसर्पतः वा. संसर्पितः (संसपर्कः)

ज१–अहर्यत, ज२–अहर्पता वा हर्पयति (अंहस्पति)

५ (अ) ज१–दर्शयोर्मध्येतयोरेवंतयोर्यदा, ज२–दर्शस्यस्याद्धागेकापरंदर्श्यं, वा. पाठोनास्ति (यस्मिन्दर्शस्यांतादर्वागेकापरापरंदर्शम्)

५ (ब) ज१–अलंध्या (उल्लंघ्य), ज१–भानो (भानोः), ज२–संक्रोतिः (संक्रान्ति)

६ (अ) ज१, ज२–क्षेमकरं, वा-क्षमकरा (क्षेमकरी), ज१–जनाना, ज२–जनीनां, ज. मो. प्रजानाम् (जनानाम्)

७ (अ) ज१–क्लिमेक, ज२–क्लिमेव, वा–क्लिवैव (खिलमेव), ज१, ज२–मुक्ताखिलं, वा–मुक्ताखिकर्म (मुक्त्वाखिलं)

७ (ब) ज२–विनाशमिति (विनाशमेति)

८ (अ) ज१, ज२–क्षेमकरं, वा-क्षमकरा (क्षेमकरी), ज१–जनाना, ज२-जनीनां, ज. मो. प्रजानाम् (जनानाम्)

८ (ब) ज१-ब्राह्मद्वयस्येप्यतुलंसुभिक्षं, ज२-ब्राह्मयस्येप्पतुलं भिक्षं, ज. मो. यस्येऽप्यमलं, वा.-द्वयस्थऽप्यतुलं (ब्राह्मद्वयेस्यादतुलं सुभिक्षम्)

९ (अ) ज१-वानर्यताच, ज१-वारनघाताच (भवेदीतिरनर्घताच)

१२ (अ) ज१-विधन्मरुद्रारि, ज२-विद्युन्मरुद्रारि, वा.-विद्यन्मरुद्वारि (विद्युन्मरुद्वारि), वा.-धरेश्चे (धनैश्च), ज१, ज२-युक्तः, वा. युते (युक्ते)

१२ (ब) ज१, ज२-त्रिदशेषु (त्रितयेषु)

१३ (अ) ज१, ज२-भगस्य, वा. भगोस्य (भंगोऽस्य), ज१-पौल्लर्क्ष वा.-पौष्णक्षरि (पौष्णर्क्षगते), ज१, ज२-पतंगे (दिनेशे) ज१, ज२-रात्रौ, वा. रात्रा च (रात्रावपि), ज१-ज२-ततदीक्षणीयम् (वीक्षणीयम्)

१३ (ब) ज१-ज२-वित्स्वादि (विश्वादि), मु.पु. यदा (गदः)

१४ (अ) ज१-स्यात्ततः, ज-२कीतकाक्षा ज.मो. कीलकाख्याः, वा.-तामसकीलकायाः (तामसकीलकाधाः)

१४ (ब) ज१, कबन्धवक्तोष्ट, ज२-कवधुवकोष्ट्र, वा-कबधकाकोल (कबन्धकोष्ट्र)

१५ (अ) ज१, ज२-वृषश्च (वृषाश्च)

१५ (ब) ज१-जगद्विपत्ताप्ति, ज२-जगद्विपानाति (जगद्विपत्तीति)

१६ (अ) ज१, ज२ (रवेतान्हिजाघ्नन्ति (श्वेताद्विजान्घ्नन्ति), ज१ ज.२-नृपश्च (नृपांश्च) ज१-वैश्चात्रसितश्च, ज२-वैश्यासिसीताश्च (वैश्यान सिताश्च)

१६ (ब) ज१, ज२-चमूपतिश्चोर्द्रमुखाश्च, ज.मो.-चमूपतिं-चौर्ध्वमुखास (चमूपतिं चौर्ध्वमुखाश्च), ज१,,ज२-प्रवोधसत्रेपि वा.-पुरोधसंतेच (पुरोधसंतेऽपि)

१७ (अ) ज१-ज२-अधोमुरवां, वा.-अधोमुखाः (अधोमुखा), ज१, ज२-धूनिशः (धूनिभाः), ज१ ज२, वा., ज.मो. क्षितीशं (क्षितीशान्) ज१ ज२-वृष्टि (वृष्टिं), ज२-वियास्ते (विधास्ते)

३

अथ चन्द्रचाराध्यायः

चन्द्रचार का फल

अमृतकिरणचारं खेटचारेषु सारं
विपुल निखिललोकानन्दनं सुन्दरं च॥
सदसदखिललोकाभोगदं यत्फलं तत्
कथितविषमकालज्ञानरूपं प्रवच्मि॥१॥

अमृत किरणों वाले चन्द्रमा का चार समस्त ग्रहों के चार में एक सार है। अधिक-से-अधिक लोगों के लिए आनन्दप्रद एवं सुन्दर माना जाता है। अच्छे-बुरे सम्पूर्ण लोगों के भोग्याभोग्य जो फल हैं, उसे ज्ञानस्वरूप उक्त विषम काल को मैं प्रस्तुत करता हूँ॥१॥

असितचतुर्दश्यन्ते प्रतिमासं चास्तमेति तुहिनकरः।
सततं दर्शस्यान्ते तुलितौ राश्यादिर्भिनियतम्॥२॥
विमलं प्रतिपद्यन्ते उदयं संयाति भास्करान्मुक्तः।
द्वादशभागाविवृद्ध्या तिथयश्चन्द्राच्च सम्भूताः॥३॥

कृष्ण चतुर्दशी के अन्त में प्रतिमास चन्द्रमा अस्त होता है। निरन्तर अमावास्या के अन्त में सूर्यचन्द्र राश्यादि कला पर्यन्त युति जानना, अतएव (दर्शः सूर्येन्दुसंगमः) चरितार्थ होता है॥२॥

प्रतिपदा के अन्त में सूर्य किरणों से मुक्त विमल मूर्ति चन्द्रमा उदय होता है तभी प्रत्येक तिथि में १२-१२ अंशानुसार वृद्धि द्वारा चन्द्रमा से तिथियाँ उत्पन्न होती हैं॥३॥

चतुर्दश्यन्तगश्चन्द्रः सर्वदास्तमयं व्रजेत्॥
अमावास्यान्तगौ चन्द्रसूर्यौ राश्यादिभिः समौ
अन्ते प्रतिपदः सूर्यान्निर्गतश्चोदयं गतः॥
शुभदः सर्वजन्तूनां सौम्यशृङ्गोन्नतोदितः॥

(क.सं. ३; १-२)

हिमद्युतेरभ्युदितस्य शृङ्गे याम्योन्नते मेषझषे सुभिक्षम्।
जनानुरागं वृषकुम्भयोश्च तुल्ये विषाणे जगतोऽखिलस्य॥४॥

मेष और मीन में उदित चन्द्रमा के याम्यो शृंग उन्नत होने पर सुभिक्षप्रद, वृष और कुम्भ में तुल्य शृङ्गोन्नति होने पर जनता में परस्पर अनुराग होता है॥४॥

सौम्योन्नते जिह्म मृगास्ययोश्च मासद्वयं स्वास्थ्यमुपैति लोकः।
सौम्योन्नते शीतनिभे सुवृष्टिः क्षेमं सदा कर्कटचापयोश्च॥५॥

मिथुनमकरस्थ चन्द्रमा के उत्तर शृङ्गोन्नत होने पर संसार में दो मास तक स्वास्थ्य लाभ, शीतसदृश चन्द्रमा के कर्क और धनुराशि में उत्तरशृङ्गोन्नति होने पर सुन्दर वृष्टि एवं कल्याण होता है॥५॥

याम्यशृङ्गोन्नतश्चन्द्रोऽशुभदो मीनमेषयोः।
सौम्यशृङ्गोन्नतः श्रेष्ठो नृयुग्मकरयोस्तथा॥
समोऽक्षघटयोः कर्कसिंहयोः शरसन्निभः।
चापकीटभयोः स्थूलः शूलवत्तौलिकन्ययोः॥
विपरीतोदितश्चन्द्रोदुर्भिक्षकलहप्रदः ।
यथोक्तोभ्युदितश्चेन्दुः प्रतिमासं सुभिक्षकृत्॥
(ना.सं. २; १, २, ३)३३

सस्याभिवृद्धिर्हरिकीटयोश्च सौम्योन्नते चापनिभे सुवृष्टिः।
अनामया वृष्टिरतीव कन्यातुलाद्वयोः शूलनिभे तथैव॥६॥

सिंहवृश्चिकस्थ चापसदृश उत्तरशृङ्गोन्नति होने पर फसलों की वृद्धि एवं कन्या और तुला में उत्तरशृङ्गोन्नति आरोग्य तथा अतिवृष्टिप्रद होती है॥६॥

एवं क्रमेणाभ्युदितः शशांकः क्षेमं सुभिक्षं जगतः करोति।
व्यस्तोदितः प्रोक्तफलं समस्तं करोति नाशं कलहं नृपाणाम्॥७॥

इस प्रकार उदित चन्द्रमा संसार में कल्याण और सुभिक्ष करता है। अस्तोदित उपरोक्त कहा हुआ फल करता है। विशेषतः राज कलह एवं नाशकारक होता है॥७॥

शृङ्गे ब्रीहियवाकारे वृष्टिः स्यान्महदर्घता।
तस्मिन्पिपीलिकाकारे पूर्वोक्तफलनाशनम्॥८॥

शृङ्ग के धान्यकण और यवाकार होने पर वृष्टि और महंगाई हो, यदि पिपीलिकाकार हो जाए तो पूर्वोक्त फल नाशकारक होता है॥८॥

विशाल शुक्ले वृद्धिः स्यादविशालेत्वनर्घता।
अधोमुखे भूपहानिर्दण्डाकारे नृपाहवः॥९॥

विशाल शुक्लत्व होने पर महंगाई की वृद्धि और संकुचित होने पर सुभिक्षप्रद हो, अधोमुख हो तो राजाओं की हानि और दण्डाकार राजाओं में युद्धप्रद होता है॥९॥

वृद्धिः शुक्ले प्लवाकारे हानिः पिपीलिकानिभे।
अर्धवृद्धिर्विशालेन्दावविशालेऽर्घनाशनम्॥

अधोमुखे राजहानिः कलहं दण्डसन्निभे।
हतशृङ्गः कुजेनेन्दुर्हन्ति प्रत्यन्तभूमिपान्।।

(क.सं. ३; ९, १०)

याम्यशृङ्गोन्नतः श्रेष्ठः (नेष्ठः) सौम्यशृङ्गोन्नतः शुभः
शुक्ले पिपीलिकाकारे हानिर्वृद्धिर्यथाक्रमात्।।
सुभिक्षकृद्विशालेन्दुरविशालोर्घनाशनः
अधोमुखे शस्त्रभयं कलहो दण्डसन्निभेः।।

(ना.सं. २. ८, ९)

नाशं ययुर्नृपतयोन्तगतः किराता मन्दे
हते हिमकरस्य नवे विषाणे।।
क्षुच्छस्त्रभीतिरतुला निहते कुजे च
दुर्भिक्षवृष्टिभयमिन्दुसुते हतेऽस्मिन्।।१०।।

चन्द्रमा की नई शृङ्गोन्नति में शनि के द्वारा हत होने पर राजाओं का नाश, किरातों का दमन, मङ्गल द्वारा हत होने पर भूखमरी, राजभय, बुध द्वारा हत हो तो दुर्भिक्ष एवं भयप्रद वृष्टि होती है।।१०।।

गुरुणा श्रेष्ठनृपतीन् शुक्रेनाल्पनृपास्तथा।
दुर्भिक्षवृष्टिभयकृद् हतशृङ्गो बुधेन सः।।
सौरिणा चास्त्रभयकृत् कृष्णेऽल्प फलदः सिते।
वर्धमाने सिते पक्षे कृष्णपक्षे क्षयं गते।।
विप्रभूमिपयोवृद्धिर्हीने हानिः समे समम्।
प्रालेय कुन्दकुमुदमुक्तास्फटिकसन्निभः।।

(क.सं. ३; ११ १२, १३)

श्रेष्ठा नृपा युधिलयं त्वमरेन्द्रवन्द्ये।
शुक्रे हते नियतमल्पनृपाश्च सर्वे।।
कृष्णे फलं त्वविकलं भवति प्रजानां
पक्षे सिते विफलमेति भवेच्च यद्वा।।११।।

बृहस्पति द्वारा हत हो तो श्रेष्ठ राजाओं का युद्ध में नाश, शुक्र द्वारा हत होने से सभी सामन्त राजा नष्ट हों, कृष्ण पक्ष में प्रजा हानि तथा शुक्ल पक्ष में सफलता प्राप्त हो।।११।।

कुज्जाद्यैर्निहते शृङ्गे मण्डले वा यथाक्रमात्।
क्षेमार्घवृष्टिनृपतिजानानां नाशकृच्छशी।।

(ना.सं. २; १०)

शुक्ल एवं कृष्ण पक्ष में चन्द्रवृद्धि का फल

वलक्षपक्षः खलुवर्द्धते चेत्क्षेमाभिवृद्धिः सततं द्विजानाम्।
कृष्णे विवृद्धौ यदि शूद्रवृद्धिर्व्यत्यासवृद्धौ स्वफलं तथैव॥१२॥

शुक्लपक्ष में चन्द्रवृद्धि से निरन्तर ब्राह्मणों का कल्याण तथा वृद्धि एवं कृष्णपक्ष में शूद्रों की अभिवृद्धि, इसके विपरीत चन्द्रमा अपना फल वैसे ही देता है॥१२॥

वृद्धिः शुक्ले प्लवाकारे हानिः पिपीलिका निभे।
अर्धवृद्धिर्विशालेन्दावविशालेऽर्धनाशनम्॥

(क.सं. ३; १)

नक्षत्रवश चन्द्रचार फल

विश्वाम्बुमूलेन्द्रविशाखमैत्रभानां यदा दक्षिणभागगेन्दुः।
बह्नेर्भयं त्वीतिभयं जनानां करोति दुर्भिक्षमतीव युद्धम्॥१३॥

पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, मूल, ज्येष्ठा, विशाखा, अनुराधा नक्षत्रों के दक्षिण भाग में चन्द्रमा जाये तो अग्निभय, ईतिभय, दुर्भिक्ष एवं युद्धप्रद होता है॥१३॥

आषाढ़द्वयमूलेन्द्रधिष्ण्यानां याम्यगः शशिः।
अग्निप्रदस्तोयचरवनसर्पविनाशकृत् ॥
विशाखामैत्रयोर्याम्यपार्श्वगः पापकृत्सदा।
मध्यगः पितृदैवत्ये द्विदैवत्ये शुभोत्तरे॥
सम्प्राप्य पौष्णभात् रौद्रात्षट्ऋक्षाणि शशिः शुभः।
मध्यगो द्वादशर्क्षाणि अतीत्य नव वासवात्॥

(ना.सं. २; ४, ५ ६)

अनुक्तभानां यदि याम्यवृत्तिं करोति वृष्टिं कलहं नृपाणाम्।
प्रजापतेर्भं यदि पैत्र्यभं वा भिनत्ति चन्द्रोऽन्तकरः प्रजानाम्॥१४॥

जो नक्षत्र नहीं कहे गए हैं, यदि उन से चन्द्रमा का दक्षिण संचार हो तो राजाओं में कलह तथा वृष्टिकारक होता है। रोहिणी और मघा नक्षत्रों में चन्द्रमा यदि भेद करे तो प्रजाक्षय कारक जानें॥१४॥

विपरीतोदितस्तेषामनिष्टायामृतद्युति ।
अप्राप्य भुङ्क्तेषड़भानि पौष्णभाद् विधुरीशभात्॥
द्वादशर्क्षाणि मध्यस्थो भुक्तेऽीत्य नवेन्द्रींात्।
अर्घभान्यनिलेन्द्राहि वसवे शान्तकानि च।
वृहद्भान्यदितीन्द्राग्नि ध्रुवसंज्ञानि यानि च॥

अन्यानि समधिष्ण्यानि क्रमादेषूदितो विधुः।।
अनर्घमहदर्घत्वं समर्घत्वं करोति सः।
तोय विश्वेन्द्रमूलानां याम्यमार्गगतः शशी।।
वह्निप्रदो जलचरो यानसर्पविनाशकृत्।
मैत्रद्विदैवयोर्याम्यमार्गवर्ती च पापकृत्।।
धातृपैतृभयोर्मध्यं गतो दुर्भिक्षकृच्छशी।
शुभदोऽखिलधिष्ण्यानां सौभ्ये याम्यगतोऽशुभः।।

भानां यदि सौम्यगतस्तदानीं जनानुरागं सततं करोति।
सदामयाप्रीतिरतीवदुःखं करोति याम्योपगतश्च भानाम्।।१५।।

चन्द्रमा नक्षत्रों के उत्तरभाग में होने पर निरन्तर लोगों में परस्पर प्रेम, प्रोन्नतिकारक, दक्षिण भाग में रोग, घृणा तथा अत्यन्त दुःखप्रद होता है।।१५।।

युञ्जाफलम्

षट्यौष्णभाद्द्वादशरौद्रधिष्ण्यात्सुराधिपाद्भानि नव क्रमेण।
पूर्वार्द्धमध्यापरभागगेन्दुर्भुक्तेऽखिलव्योमचरास्तथैव।।१६।।

रेवती नक्षत्र से ६ नक्षत्र तक पूर्व (आदि) युंजा आर्द्रा नक्षत्र से द्वादश नक्षत्र पर्यन्त मध्य युंजा, ज्येष्ठा से नौ (९) नक्षत्र पर्यन्त अपर (अन्त्य) युंजा का चन्द्रमा भोग करता है। इसी प्रकार शेष ग्रहों के सन्दर्भ में भी जानना।।१६।।

पूर्वार्द्धधिष्ण्येषु पतिप्रिया स्याद् विवाहिता मध्यमभागगेषु।
परस्परं प्रेमतयोर्नृनार्योः परेषु भर्त्ता वनिताप्रियः स्यात्।।१७।।

आदि युंजा में कन्या का जन्म हो तो विवाह होने पर पतिप्रिया, मध्य युंजा में जन्म हो तो पति-पत्नी की परस्पर गाढ़ प्रीति, अन्त्य युंजा हो तो पुरुष स्त्री का अत्यन्त प्रिय होता है।।१७।।

युंजा ज्ञानाय चक्रम्

युञ्जा	नक्षत्राणि
पूर्व (आदि)	रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा
मध्य	आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा
अन्त्य	ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा